International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 4; July 2017; Page No. 62-70

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीयता

डॉ. पी. तिरुपतम्मा

रीडर, हिन्दी विभाग, बी .सी.ए.स. कालेज, बापट्ला, आँध्र प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

राष्ट्रकवि रामधारीसिंह दिनकर (23 सितंबर 1908-- 24 अप्रैल 1974} उन विरल साहित्यकारों में से एक है। जिनके साहित्य और व्यक्तित्व में अद्भुत साम्य है। अपनी कल्पना को जीवन के सब क्षेत्रों में अनंत अवतार देने की क्षमता उनकी खास विशेषता थी।

विश्व विख्यात कवि,साहित्यकार, दार्शनिक और साहित्य क्षेत्र में 'ज्ञानपीठ' पुरस्कार विजेता दिनकर, हिन्दी साहित्य के माध्यम से भारतीय राष्ट्रीय चेतना में नयी जान फूँकनेवाले युगपुरुष थे।। उनके काव्य में देश और समाज किलिए मर-मिटने की तमन्ना भी मिलेगी। इसलिए इन्हे राष्ट्रकवि कहा जाता था और साथ में 'दिनकर' भी।

दिनकर हिंदी जगत के ही नही वरन विश्व साहित्य के अद्वितीय कवि एवं लेखक माने जायेंगे। वैसे ही हिंदी जगत में उनका आज भी और कल भी अपना महत्वपूर्ण स्थान होगा। वे आधुनिक युग के श्रेष्ठ् वीर रस के कवि के रूप में प्रसिध्द हुए है। उन्होंने स्वतंत्रता पूर्व एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित हुए और स्वतंत्रता के बाद राष्ट्र कवि के नाम से जाने गए।

छयावादोत्तर –कालीन कवियों में कविवर रामधारीसिंह 'दिनकर' का स्थान विशिष्ठ है। उनके काव्य में राष्ट्र की युगीन प्रव्रृत्तियाँ विशेष रूप से प्रतिबिंबित हुई है। आधुनिककाल के कवियों में हिंदी काव्य की राष्ट्रीय-धारा का सशक्त प्रतिनिधित्व जिन कवियों ने किया है, उनमें राष्ट्र-कवि मैथिलीशराण गुप्त के पश्चात दिनकर का स्थान सर्वोपरी है। "गुप्तजी की कविता में राष्ट्र की चेतना समाज सुधार और धार्मिक औदात्य की सीमा से मुखरित हुई थी और दिनकरजी की कविता में राष्ट्रीयता का विकास, सामाजिक संघर्ष और, राजनीतिक क्रांति से सीधे-सीधे जुडा है।"[1]

एक ओर उनकी कविताओं में ओज, विद्रोह, आक्रोश और क्रांति की पुकार है तो दूसरी ओर कोमल श्रृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति है। इन्ही दो प्रवृत्तियों का चरम उत्कर्ष हमें उनकी कुरुक्षेत्र और ऊर्वशी नामक क्रुतियों में मिलता है। उनकी सहित्य सेवाओं केलिए 1972 में ऊर्वशी को भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला है तथा कुरुक्षेत्र को विश्व के 100 सर्वश्रेष्ठ काव्यों में 74 वाँ स्थान दिया गया।

जीवन परिचय

जन्म एवं बाल्यकाल

राष्ट्र कवि रामधारीसिंह 'दिनकर' का जन्म बिहार प्रांत में सिमरिया नामक गाँव में 23 सितंबर 1908 ई.में हुआ था। इनके पिता रविसिंह था और माता का नाम मनरूपदेवी। रविसंह एक साधारण क्रृषक थे। बालक दिनकर जब एक वर्ष के थे तभी पिता का स्वर्गवास हो गया। आर्थिक विषमताओं के बीच उनका बाल्यकाल् बीत गया।

शिक्षा

दिनकर की प्राथमिक शिक्षा गाँव में हुई। 1928 में मेट्रिक के बाद दिनकर ने पाट्ना विश्वविघालय से 1932 में इतिहास में बी.ए. आनर्स किया।

कवि को बचपन से ही कविता के प्रति रुचि थी जो उत्तरोत्तर बढ्ती ही गई। श्री गोपालक्रृष्ण जी के वार्तालाप से प्रस्तुत उनके शब्दों में करे तो –- "मैं न तो सुख में जन्मा था, न सुख में पलकर् बडा हूँ। किंतु मुझे साहित्य में काम करना है। यह विश्वास मेरे भीतर छुटपन से ही पैदा हो गया था। इसलिए ग्रेज्युएट होकर जब मै परिवार केलिए रोटी अर्जित करने में लग गया तब भी, साहित्य की साधना मेरी चलती रही।"[2]

पद

पटना विश्वविघालय से बी.ए. आनर्स करने के बाद वे एक स्कूल में प्रधानाध्यापक के पद पर नियुक्त हुए। 1934 से 1947 तक बिहार सरकार की सेवा में सब-रजिस्टार और प्रचार विभाग के पदों पर कार्य उपनिर्देशक किया। 1947 में देश स्वाधीन हुआ। वह बिहार विश्वविघालय में हिंदी के प्राध्यापक व विभागाध्यक्ष के पद पर नियुक्त होकर मुजफरपुर पहूँचे। 1952 में जब भारत की प्रथम संसद का निर्माण हुआ, तो उन्हे राज्य सभा का सदस्य के रूप में बिहार से चुना गया और वह दिल्ली आ गए। दिनकर 12 वर्ष तक संसद का सदस्य रहे , बाद में सन 1964 से 1965 ई.तक भगलपुर विश्वविघालय के कुलपति पद को संभाला। परंतु उसे भी छोड दिया और वे 1965 से 1971 तक भारत सरकार के हिंदी सलाहकार बने, और इसी बीच में वे हिन्दी के कार्य को आगे धीरे-धीरे बढाते रहे।

साहित्य स्रृजन – काव्य संग्रह

काव्य रचना करने की प्रव्रृत्ति उन्में बचपन से ही थी, किन्तु उन्में विशेष रूप से पं. रामनरेश-त्रिपाठी रचित 'पथिक' व राष्ट्रकवि स्व. मैथिलीशरणगुप्त रचित भारत-भारती क्रृतियों का प्रभाव था, उस आधार पर उन्होंने कई सर्ग लिखे किंतु उन्हे वह आगे नही बढा सके। उनका सबसे पहला काव्य ग्रन्थ 1929 में 'प्रण्भंग' के नाम से प्रकाशित हुआ था, यह ग्रंथ उस समय प्रकाशित हुआ था, जब की दिनकर मेट्रिक्युलेषन की परीक्षा दे चुके थे। इसके उपरांत दूसरा काव्य 'रेणुका' के नाम से प्रकाशित हुआ। तीसरा संग्रह सन 1939 मे प्रकाशित हुआ है। यही काव्य संग्रह से वे राष्ट्र कवि के रूप् में अवतरित हो गए है।

प्रमुख क्रृतियाँ

परिणाम और प्रव्रृत्ति के आधार पर दिनकर की क्रृतियों का वर्गीकरण इसप्रकार कर सक्ते है। काव्यक्रृतियाँ , संस्मरण, सांस्क्रृतिक, आलोचनात्मक, यात्रा विवरणत्मक रचनाएँ, निबंध एवं कला और गध्य-काव्य। काव्येतर क्रृतियों में

संस्मरणात्मक कृतियाँ है। जिन्में विविध व्यक्तियों और घटनाओं के संबंध में दिनकर की अनुभूति कीचित्रकृतियाँ है। इनमें कवि के निश्चल व्यक्तित्व का प्रकाशन हुआ है। उन्होने सामाजिक और आर्थिक असमानता और शोषण के खिलाफ कविताओं की रचना की। एक प्रगतिवादी और मानववादी कवि के रूप में उन्होंने ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं को ओजस्वी और प्रखर शब्दों का प्रयोग किया। उनकी महान रचनाओं में रश्मिरथी {1952) और परशुराम की प्रतीक्षा (1963) शामिल है। ऊर्वशी (1961) को छोड्कर दिनकर की अधिक्तर रचनाएँ वीर रस से ओतप्रोत है। भूषण के बाद उन्हें वीर रस का सर्वश्रेष्ठ कवि माना जाता है।''[3]

दिनकर के साहित्य में तीन काव्य—संग्रह प्रमुख है – 'रेणुका' (1935 ई.), 'हुंकार' (1938 ई,) और 'रसवंती' (1939 ई.) -- ये रचनाएँ उनके आरंभिक आत्ममंथन के युग की रचनाएँ है। इनमें दिनकर का कवि अपने व्यक्ति परक, सौंदर्यान्वेषी मन और सामाजिक चेतना से उत्तम बुध्दि के परस्पर संघर्ष का तटस्थ द्रष्टा नही, दोनों के बीच से कोई राह निकालने की चेष्टा में संलग्न साधक के रूप में मिलताहै। रेणुका - में अतीत के गौरव के प्रति कवि का सहज आदर और आकर्षण परिलक्षित होता है। परसाथ ही वर्तमान परिवेश की नीरसता से त्रस्त मन की वेदना का परिचय भी मिलता है। हुंकार – में कवि अतीत के गौरव गान की अपेक्षा वर्तमान स्थिति के प्रति आक्रोश प्रदर्शन की ओर अधिक उन्मुख जान पडता है।

रसवंती – (1939) में कवि की सौंदर्यान्वेषी वृत्ति काव्यमयी हो जाती है, पर यह अंधेरे में ध्येय सौंदर्य का अन्वेषण नही, उजाले में ज्ञेय सौन्दर्य का आराधना है। सामिधेनी (1947 ई.) – में दिनकर की सामाजिक चेतना स्वदेश और परिचित परिवेश की परिधि से बढ्कर विश्व वेदना का अनुभव करती जान पड्ती है। कवि के स्वर का ओज नये वेग से नये शिखर तक पहूँच जाता है।

काव्य रचना

इन मुक्तक काव्य संग्रहों के अतिरिक्त दिनकर ने अनेक प्रबंध काव्यों की रचना भी की है,जिन्में 'कुरुक्षेत्र'(1946 ई.), 'रश्मिरथी'1952 ई.) तथा 'ऊर्वशी' (1961 ई.)प्रमुख है- -हिंदी, जगत मेंउन्हें इन काव्यों से विशेष सम्मान मिला है।

'कुरुक्षेत्र' – - महाभारत के शांति-पर्व का कविता रूप है। यह दूसरे विश्वयुध्द के बाद लिखी गयी रचना है। महाभारत के शाँति पर्व के मूल कथानक का ढाँचा लेकर दिनकर ने युध्द और शँति के विशद, गम्भीर और महत्वपूर्ण विषय पर अपने विचार-- भीष्म और युधिष्ठ्र के संवाद के रूप में प्रस्तुत किया है। दिनकर के काव्य में विचार तत्व इस तरह उभरकर सामने पहले कभी नही आया था। साहस पूर्वक् गाँधीवादी अहिंसा की आलोचना करनेवाले 'कुरुक्षेत्र' का हिंदी जगत में यथेष्ट आदर हुआ।

सामिधेनी : (1947) -- सामिधेनी की रचना कवि की सामाजिक चिंतन के अनुरूप हुई है।

रश्मिरथी; (1952) – में कवि 'कर्ण और 'कुंती' के पात्रों के द्वारा सामाजिक विषमताओं के अंधकार में तडपनेवाली वर्तमान समाज का उद्धार करना चाहते है।

संस्कृति के चार अध्याय (1956) - में दिनकर ने कहा कि सांस्कृतिक, भाषाई और क्षेत्रीय विविधताओं के बावजूद भारत एक देश है। क्यों कि सारी विविधताओं के बावजूद भी हमारी सोच एक जैसी है।

'कुरुक्षेत्र' के बाद उनके नवीनतम काव्य 'ऊर्वशी' में फिर हमें विचार तत्व की प्रधानता मिलती है।

ऊर्वशी : ज्ञानपीठ से सम्मनित उनकी रचना ऊर्वशी की कहानी मानवीय प्रेम, वासना से संबंधित है।

'ऊर्वशी' स्वर्ग परित्यक्ता एक अप्सरा की कहानी है। 'ऊर्वशी' जिसे कवि ने स्वयं 'कामाध्याय' की उपाधि प्रदान की है। यह दिनकर की कविता को एक नये शिखर पर पहूँचा दिया है। भले ही सर्वोच्छ् शिखर न हो, दिनकर के क्रृतित्व की गिरिश्रेणी का एक सर्वथा नवीन शिखर तो है ही।

'नीलकुसुम' (1955) - दिनकर के काव्य में एक नया मोड बनकर आया। यहाँ वह काव्यात्मक प्रयोगशीलता के प्रति आस्थावान है। स्वयं प्रयोगशील कवियों को अजमाल पहनाने और राह पर फूल बिछाने की आकांक्षा उसे विह्वल कर देती है। नवीनतम काव्यधारा से संबंध स्थापित करने की कवि की इच्छा तो स्पष्ट हो जाती है, पर उसका क्रृतित्व साथ देता नही जान पड्ता है। अभी तक उनका काव्य आवेश का काव्य था। 'नीलकुसुम' ने नियंत्रण और गहराइयों में बैठ्ने की प्रव्रृत्ति की

सूचना दी। छः वर्ष के बाद ऊर्वशी प्रकाशित हुई, हिंदी साहित्य संसार में एक ओर उसकी कटु आलोचना और दूसरी ओर मुक्तकंठ से प्रशंशा हुई। धीरे धीरे स्थिति सामान्य हुई। इस काव्य नाटक को दिनकर की 'कवि प्रतिभा का चमत्कार माना गया'। कवि ने इस वैदिक मिथक के माध्यम से देवता व मनुष्य, स्वर्ग व प्रृथ्वी, अप्सरा व लक्ष्मी का उग्र काम और अध्यात्म के संबंधों का अद्भुत विश्लेषण किया है।

गध-लेखक

"यघपि दिनकर जी मुख्यतः कवि के रूप में प्रसिध्द रहे, पर वे अपने समय के सर्वश्रेष्ठ हिंदी वक्ताओं में एक थे। उनके गध-ग्रन्थ भी रोचक और उत्साहवर्धक है।

यात्रा साहित्य

उन्होंने रूस, पोलंड, जर्मनी, मिस्र,चीन और् मारिशस की यात्रा की, जिसका विवरण 'मेरीयात्रा' के रूप में लिखा। उत्तर और दक्षिण की एकता के बारे में उन्होंने 'भारतीय एकता' नामक पुस्तक लिखी।

संस्मरण : नेहरु के संस्मरण में 'लोकदेव नेहरु' के नाम से और 'राष्ट्रभाषा आंदोलन और गांधीजी' के नाम से उन्होंने एक और पुस्तक् लिखी।

निबंध : उनके कुछ निबंध 'शुध्द कविता की खोज', 'साहित्य मुखी', संस्मरण और श्रध्दांजलिया, 'रेती के फूल' नाम से प्रकाशित हुए।

अनुवाद

आप की 'हिमालय' और 'नई दिल्ली' दो कविताओं का गुजराती में भी अनुवाद किया गया।[4]

सम्मन, पुरस्कार एवं उपाधियाँ

दिनकर को उनकी रचना कुरुक्षेत्र केलिये काशी नागरी प्रचारिणी सभा, उत्तर प्रदेश सरकार और भारत सरकार से सम्मान मिला। संस्क्रृति के चार अध्याय केलिए 1959 में साहित्य अकाड्मी का साहित्य पुरस्कार से सम्मानित किया गया। भारत का प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्रप्रसाद ने उन्हें 1959 में 'पद्मविभूषण' का अलंकार दिया। भागलपुर विश्वविघालय के तत्कालीन कुलपति और बिहार के राज्यपाल जाकीरहुसैन, जो बाद में भारत के राष्ट्रपति बने है। उन्होंने उन्हें डाक्टरेट की मानद उपाधि से सम्मानित किया। गुरु महाविघालय ने उन्हें विघावाचस्पति केलिए चुना। 1968 में राजस्थान विघापीठ ने उन्हें साहित्य-

चूडामणी से सम्मनित किया। सन 1972 में ऊर्वशी काव्य केलिए उन्हें ज्ञानपीठ से सम्मानित किया गया। 1952 में वे राज्यसभा केलिए चुने गये और लगातार तीन बार राज्यसभा के सदस्य रहे।

मरणोपरांत सम्मान

24 अप्रैल 1974 में दिनकर की म्रृत्यु हुई। इससे हिंदी काव्य का ही नही, हिंदी जगत का एक अत्यंत ज्वलंत शिखर गिर गया। क्योंकि उन्होंने एक भाषा या एक क्षेत्र की नही, बल्कि सारे भारत की आत्मा को अपने वाणी के द्वारा प्रतिध्वनित किया था। 30 सितंबर 1987 को उनकी 13वीं पुण्यतिथि पर तत्कालीन राष्ट्रपति जैलसिंग ने उन्हें श्रध्दांजली दी। 1999 में भारत सरकार ने उनकी स्म्रृति में डाक टिकट जारी किया। केंद्रीय सूचना और प्रसारण मंत्री प्रियरंजनदास मुंशी ने उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर रामधारीसिंह दिनकर-व्यक्तित्व और क्रृतित्व पुस्तक का विमोचन किया। उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर बिहार के मुख्यमंत्री नितीश कुमार ने उनकी भव्य प्रतिमा का अनावरण किया। कालिकट विश्वविघालय में भी इस अवसर को दो दिवसीय सेमिनार का आयोजन किया गया।

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय तत्व

राष्ट्रीयता का अर्थ किसी देश की भौगोलिक सीमा के भीतर निवसित जनसमूह की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्क्रृतिक और ऐतिहासिक चेतना के समन्वित स्वरूप से है।

राष्ट्रीयता एक ऐसी भावना है, जो देश की जनता को संगठित रखती है, गुलामी के दिनों में स्वतंत्रता की चेतना फूँकती है, मुक्ति संग्राम में मर मिटने का आह्वान करती है और कवियों तथा रचनाकारों को राष्ट्र, जाति और धर्म की रक्षा केलिए आंदोलन जगाने और राष्ट्र पर सर्वस्व समर्पण की भावना भरनेवाली रचनाएँ लिखने का प्रोत्साहन भी देती है।[1] इस राष्ट्रीयता का प्रारंभ एक भावना के रूप में 19वी शताब्दी में हुआ। हिंदी के राष्ट्रीय साहित्य पर पश्चिम का गहरा प्रभाव पडा है।

हिन्दी के राष्ट्रीय काव्य से आशय उस काव्य संग्रह से है जो इस सदी के उस काल में सामाजिक उथ्थान, राजनीतिक् जागरण एवं नवनिर्माण की प्रबल चेतना से स्फूर्ति पाकर भारतेन्दु साहित्य में प्रस्फुटित होकर द्विवेदी-युग में फैला। वैसे तो राष्ट्रीयता का प्रथम उन्मेष सन 1857 के विद्रोह में हो चुका था, किंतु सन 1885 के 'राष्ट्रीय कांगेस' का जन्म एवं तिलक की 'स्वराज्य हमारा जन्मसिध्द अधिकार है' की थपेडे में वेग पकडती हुई, गाँधीजी के असहयोग आँदोलन के रूप में सुलगते-सुलगते वही सन 1942 में विध्वंसक ज्वालामुखी के रूप में फूट पडी। कविता में द्विवेदी- युग के पुरोधा कवि मैथिलीशरण गुप्त की भारत-भारती में 'हम कौन थे, क्या हो गये, और 'क्या होगी अभी' के रूप में उसी भावना का तिक्त प्रकाशन हुआ है। गुप्तजी के कथा काव्यों में हमें गाँधीवादी राष्ट्रभक्ति का सगुणित स्वरूप ही मिल पाया था कि राष्ट्रीयता की मशाल लेकर जो विद्रोही कवि-टोलिया अग्रसर हुई है, उसके प्रतिनिधि थे माखनलाल चतुर्वेदी और बाल्कृष्ण शर्मा 'नवीन'। स्वतंत्रता की प्रसव-पीडा आक्रांत भारत-जननी के सपूतों की सारी हल् चल,सारी विध्वंसकता एवं मर मिटने की इन कवियों ने बडी निर्भीकता से नेत्रृत्व किया। राष्ट्रीयता की भेरी बजाती इनकी रचनाएँ कभी 'हिमकिरीटिनी के अंतर से ---

'रक्त है'? या है नसों से क्षुद्र पानी।
जाँच कर तू सीस दे देकर जवानी।।

की आत्मबलिदानी भावना भरती हुई प्रचलित हुई तो कभी -- -

"नाश ! नाश !! हाँ महानाश !!! की प्रलयंकरी आँख खुल जाये।
कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल-पुथल मच जाये।।

जैसी महाविध्वंसक उत्तेजना फैलती रही। गुप्तजी के बाद राष्ट्रीय कविता के जिस विद्रोही परम्परा को 'एक भारतीय आत्मा' लेकर आगे बढे, दिनकर जी उसी परम्परा की चरम उपलब्धि है। उनके काव्य में विद्रोही राष्ट्रीयता के सभी तत्व यथेष्ट मात्रा में मिल जाते है। जैसा की उपाध्याय जी ने कहा है कि- "दिनकर परतंत्र भारत के वास्तविक वैतालिक थे।"[5] दिनकर तद्युगीन राजनीतिक क्रांतिकारियों के संघर्ष प्रोत्साहक एवं गाँधीयुगीन विद्रोही राष्ट्रीय चेतना के वाहक क्रांतिकारी साहित्य स्रष्टा है। स्वातंत्रय,
संस्कृति, युगीन चेतना और विश्व मानवता आदि उनकी राष्ट्रीयता के प्रमुख तत्व है, जिनपर दिनकर की रचनाओं का विशद प्रसाद खडा है।

क्रांतिपरक राष्ट्रीयता

दिनकर जी भारतीय स्वातंत्रय के प्रबल समर्थक और पोषक कवि है, जनजागरण के वाहक, विद्रोही और क्रांतिकारी राष्ट्रीय कवि है। बिहार और बंगाल के आतंकवादी युवकों द्वारा सर्जित विस्फोट वातवरण को उन्होंने समीप से देखा ही नही, ह्रदय से सराहा भी है। इसी परिवेश ने उनके व्यकतित्व को प्रभावित किया है। कवि का आत्मकथन देखिए – 'राष्ट्रीयता मेरे व्यक्तित्व के भीतर से नही जन्मी उसने बाहर से आकर मुझे आक्रांत किया है"[6] इससे प्रकट है कि—"बिहार की विद्रोही राष्ट्रीय चेतना के अग्निमय वातावरण में उनके कवि व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है।"[7] स्वभाव से वह भावुक कवि रहा किंतु संस्कार एवं वातावरण ने उसमें राष्ट्र प्रेम पैदा किया। फिर तो "राष्ट्रीयता उनकी आत्मा का प्रधान
स्वर"[8] बन गया। इस राष्ट्रीयता ने ही दिनकर को उद्दीप्त क्रांतिकारी बना दिया। फिर तो उन्हें अत्यधिक-- "उग्र विचारों का राष्ट्रीय कवि"[9] की स्वीक्रृति दी जाने लगी। उसकी प्रारंभिक रचना 'तांडव' का हाहाकार सुनिए –

"घहरे प्रलय-प्रमोद गगन में
अंध-घूम हो व्याप्त भुवन में,
बरसे आग, बहे मलया-निल
मचे त्राहि जग के आँगन में
फटे अनल पाताल, धँसे जग,
उछल-उछल कूदे भूधर ,
नाचो, हे नाचो नटवर।"[10]

------ रेणुका -2

'रेणुका' का क्रांति-स्वर वीर भगतसिंह के उपासक युवकों के श्रध्दाभाव का पूरक है। 'हुंकारं' में पहूँचकर तो यही पागलपन का रूप ले लेता है और कवि आत्मसंतुलन खोकर नाश और विध्वंस के कट्टर आवाहक स्वर में चीख उठ्ता है:--

"नही जीते जो सकता देख
विश्व में झुका तुम्हारा भाल,
वेदना-मधु का भी कर पान

आज उगलूँगा गरल कराल।"

----------हुंकार-10

'हिमालय' और 'कस्मैदेवाय' में क्रांति की सही लालिमा भूषण की रंगीनी और लेनिन के दिल में चिनगारी की तरह फूट पडती है। कवि चीख-चीखकर जगाते हुए कहता है –

"युग मर्दित यौवन की ज्वाला।
जाग-जाग री क्रांति कुमारी।" [12]

---------रेणुका---32

क्रांति के स्वर-----क्रांति कीआराधना

दिनकर के काव्यों में राष्ट्र के प्रति गौरव गान के साथ राजनीतिक तथा सामाजिक् क्रांति के जो प्रखर स्वर गूँजते थे उसने असंख्य युवकों के हृदयों को स्पूर्ति से भर दिया था। काव्य के प्रारंभ में कवि कविता को क्रांति-वाहिका के रूप में ग्रहण करता है।उन्होंने क्रांतिकुमारी कीअर्चना उग्रतावादी स्वरों द्वरा की है। ।उनकी प्रथम कृति 'रेणुका' के द्वारा समाज में क्रांति का बीजारोपण हो चुका है। वे पराधीन देश की आत्मा में छिपी चिनगारी के बारे में यों कहा है –

"अबुधि अस्तल बीच भी
यह सुलग रही है कौन आग ।"[13]

रेणुका के 'मंगल आह्वान' प्रारंभिक काव्य में भी वह श्रृंगी फूंककर सोए प्राणों को जगाना चाहता है---

"दो आदेश फूँक दू श्रृंगी, उठे प्रभाती राग महान।
तीनों काल ध्वनित हो स्वर में, जागे सुप्त भुवन के प्राण॥
गत विभूति भावी की आशा, ले युगधर्म पुकार उठे ।
सिंहों की घन-अंध गुहा में, जाग्रृत की हुंकार उठे ॥"[14]

कवि ऐसे स्वरों को गाना चाहता है। जिससे सारी सृष्टि सिहर उठे। उन्होंने देश में व्याप्त अत्यचार, आडंबर और अहंकार को दूर करने केलिए शंकार के 'तांडव' और तत्जन्य ध्वंस की कामना करता है----

"सुन श्रृंगी-निर्घोष पुरातन, उठे सृष्टि-हत में नव स्पंदन।
विस्फारित लख काल नेत्र फिर, कांपे त्रस्त अतनु मन ही मन ॥
स्वर-स्वर भर संसार, ध्वनित हो नगपति का कैलश शिखर ।
नाचो हे नाचो नटवर॥"[15]

'कस्मैदेवाय' काव्य के द्वारा समाज में व्याप्त शोषण और अत्याचार को भस्म करनेवाले ज्वाला को सुलग्ना चाहते है –

"क्रांति-धात्रि कविते! जागे, उठ आडंबर में आग लगा दें ।
पतन पाप पाखंड जले, जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे।" [16]

मजदूर और कृषकों की समस्या का समाधान कवि साम्यवाद की स्थापना और क्रांति में ही डूँढ़ता है। क्रांति स्वयं 'दिगंबरा' और विपथागा' बनकर कवि की राष्ट्रीयता में रूपाइत होती है। वह क्रांति कुमारी को जगाता है –

"उठ भूषण की भाव तरंगिणि, लेनिन के दल की चिनगारी ।
युग मर्दित यौवन की ज्वाला, जाग जाग री क्रांति कुमारी ॥"[17]

-----रेणुका – कस्मैदेवाय 33

स्वतंत्रता की प्राप्ति केलिए देश में क्रांतिकारीदल जिस प्रकार की कार्यवाही में संलग्न था, कवि उसका समर्थन करता है। उसे हिंसात्मक क्रांति में श्रध्दा है। दिनकर की बलवती क्रांति-भावना पर बंगाल-बिहार के क्रांतिकारी षड्यंत्रों एवं बम-विस्फोटों का सहारा लेनेवाले आतंकवादियों का प्रभाव है। और यह प्रभाव इतना गहरा बनता गया है कि गाँधीजी की श्रध्दा भावना से भी उसकी उग्रता में कही व्याघात नही आने पाया है। वह 'हिमालय' में युध्द और विध्वंस का आह्वान करते हुए गाँधी की शाँति-नीती की जगह आतंकवाद और रक्तिम क्रांति को महत्व देते हुए कहते है:-----

"रे, रोक युधिष्ठिर को न यहाँ, जाने दे उनको स्वर्ग धीर ।
पर फिरा हमें गांडीव-गदा, लौटा दे अर्जुन भीम वीर ॥"[18]

----हुंकार – 56

इसमें अर्जुन-भीम, तत्कालीन आतंकावादियों के प्रतीक है। कवि त्याग तप को छोडकर एसे ही युवकों का आह्वान करते हुए कहता है:-----

"नवयुग शंख-ध्वनि जगा रही ,
तू जाग-जाग मेरे विशाल।"[19]

---- हुंकार --57

दिनकर के उदग्र स्वर पर सन 1942 के 'जन-विद्रोह' एवं 'आजाद हिंद फौज' के मुक्ति अभियान का भी गहरा रंग है। 'भारत छोडो' की घोषणा और जयप्रकाश जी के क्रांतिकारी ओजस्वी एवं कर्म निष्ठ व्यक्तित्व की जीवित अनुभूति है। जयप्रकाश कवि केलिए क्रांति की आत्म-बलिदानी- भावना का प्रतीक रहा है। सिर पर कफन बांधकर सर्वस्व होम देनेवाले राष्ट्र भक्ति का वाचक रहा है। युवा-क्रांति के उस उद्घाटक पुरुष के प्रति कवि की भावनांजलि देखिए:---

"जय हो, भारत के नये खड्ग, जय तरुण के सेनानी,
जय नई आग! जय नई ज्योती, जय नए लक्ष्य के अभिमानी।
x x x x
हे जयप्रकाश वह जो न कभी, सीमित रह सकता घेरे में,
अपनी मशाल जो जला, बाँटता फिरता ज्योति अंधेरे में।"[20]

- --सामिधेनी---प्रृ.40

क्रांतिकारी कवि दिनकर के पौरुष और रोष आक्रोश पर सन 1962 के चीनी आक्रमण ने नया पानी चढा दिया। फिर तो क्रांति का जो ज्वालामुखी अब तक 'रेणुका' और हुंकार की रचनाओं –- 'स्वर्ग दहन', 'आलोकधन्वा', ' दिगंबरी', अनल किरीट' और 'विपथगा' में धधक रहा था। पराजित मनः स्थिति की बेला में वही क्रांति कवि-कंठ से स्वातंत्रय-रक्षण केलिए चिंतकों, ऋषियों और योगियों तक सारे भारत को रण की ओर ले जाने का आह्वान

करता है। उसकी दृष्टि ने नये भारत का भाग्य-पुरुष परशुराम के स्वदेश रक्षक शैर्यदीप्ति स्वरूप् के आवरण को कवि देख रहा है। उस अवतारी पुरुष के-- -

"है एक हाथ में परशु, एक में कुश है,
आ रहा नये भारत का भाग्य पुरुष है।"[21]

------ परशुराम -15

'जनता जगी हुई है' कविता में मुक्ति की बाजी जीतने केलिए जीवन को मरण के दाँव पर लगाने को ललकार करते हुए कवि कहते है –--

"खेल मरण का खेल, मुक्ति की यह पहली बाजी है।
सिर पर उठा वज्र, आँखों पर से हरि का अभिशाप,
अग्नि-स्नान के बिना धुलेगा नही राष्ट्र का पाप।" [22]

--- -- परशुराम – 42

अर्थात दिनकर की राष्ट्रीयता आरंभ से ही क्रांतिगर्भित रही है। जिसमें पराक्रम ओज एवं विस्फोटक प्रलय की अग्नि सतत सुलगती रही है। क्रांति उसका अभीष्ट उपकरण है। इसकेलिए क्रांति साध्य नही, साधन है। साध्य तो है स्वतंत्रय, देश की सुख-शाँति और सम्रृध्दि। क्रांति ही इन सबको संभव बनाती है। इसी क्रांति गर्जन के माध्यम से कवि राजनीतिक स्वातंत्र्य की प्राप्ति चाहता रहा है और आजादी के बाद सच्चे स्वातंत्रय सुख के अभाव को देख पुनः आक्रमक स्वरूप लेकर आता है। दिनकर का क्रांति-स्वर नारेबाजी ही नही, क्रियाशीलता और कर्मठ्ता का भी पर्याय रहा है।

'रेणुका' से 'हुंकार' तक आते-आते क्रांति का यह स्वर स्थिरता और पूर्णता प्राप्त करता है। इस संदर्भ में श्री रामवृक्ष बेनिपुरी का कथन द्रष्टव्य है ----"हमारे क्रांति युग का सम्पूर्ण प्रतिनिधित्व कविता में इस समय दिनकर कर रहा है। क्रांतिवादी को जिन-जिन हृदय –मंथनों से गुजरना होता है, दिनकर की कविता उनकी सच्ची तस्वीर रखती है।"[23] हुंकार में कवि अपने विकल गीतों को स्वतंत्रता –यज्ञ में आहुति देने के निमित्त संयोजित करता है---

"रण की घडी जलन की बेला, तो मैं भी कुछ गाऊँगा।
सुलग रही यदि शिखा यज्ञ की, अपना हवन चढाऊँगा॥
x x x x
नए प्रात के अरुण ! तिमिर-उर में मरीचि संधान करो।
युग के मूक शैल जागो हुंकारो, कुछ गान करो॥"[24]

हुंकार का कवि तूफान का आह्वान करता है। कवि स्वर्ग तक को जला देने की मतेच्छा व्यक्त करता है। 'आलोक धन्वा' काव्य में दिनकर क्रांति द्रष्टा के रूप में उपस्थित होते है। उनका रूप बडा दिव्य और ज्वलंत है -----

"ज्योतिर्ध्र्र कवि में ज्वलित सौर मंडल का।
मेरा शिखंड अरुणाम किरीट अनल का॥
रथ में प्रकाश के अश्व जुते है मेरे।
किरणों में उज्ज्वल गीत गुंथे हैं मेरे॥"[25]

क्रांति का कवि अपने आप को विभापुत्र मानकर कराल हुंकार भरनेवाला, यौवन में भीषण ज्वार उत्पन्न करनेवाला मानते है। वह पंखुरियों के कोमल-स्वरों के स्थान पर शैलों की हुंकार ही सुनना चाहते है। क्रांति का आविर्भाव उस समय होता है जब प्रजा की यातनाएँ, कुंठाएँ और बेबसी उग्र रूप धारण कर लेती है। प्रतीकार की भावना जब कुहासे को तोड्कर बाहर आना चाहती है तब क्रांति-कुमारी का रूप निखरता है। 'दिगंबरी' और 'विपथगा' रचनाओं के द्वारा कवि ऐसी ही क्रांति की उद्भावना प्रस्तुत करता है ---

"नए युग की भवानी आ गई बेला प्रलय की।
दिगंबरी ! बोल, अम्बर में किरण का तार बोला॥
x x x x
नवागम कोर से जागी बुझी ठंडी चिता भी।
नई श्रृंगी उठाकर व्रृध्दभारतवर्ष बोला॥
दरारें हो गई प्राचीर में बंदी भवन के,
हिमालय की दरी का सिंह भीमाकार बोला॥"[26]

भगवान की संतान जब दुःख और दरिद्रता से विलखती है तब कवि उसकी सृष्टि के ध्वंस केलिए तैयार हो जाता है ---

" जरा तू बोल तो सारी धरा हम फूँक देंगे।
पडा जो पंथ में गिरि कर उसे दो टूक देंगे॥
कही कुछ पूछने बूढा विधाता आज आया।
कहेंगे, हाँ तुम्हारी सृष्टि को हमने मिटाया॥" [27]

'दिगंबरि' में कवि का ओज-स्फूर्त व्यक्तित्व, प्रलयकारी रूप और प्रभंजक क्रोध अपनी पराकाष्ठा पर पहूँच गया है।[28]

युगीन चेतना में राष्ट्रीयता

दिनकर के राष्ट्रीय काव्य-व्यक्तित्व का जिस युग में गठन हुआ, वह भारतीय इतिहास का सर्वाधिक प्रव्रृत्तमय, क्रांतिकारी एवं राजसत्ता के विरुध्द व्यापक संघर्ष का युग था। इसी बाहरी क्रांति, बलिदान, षड्यंत्र एवं विस्फोट स्थिति ने कवि व्यक्तित्व को आक्रांत किया। वह युग सामाजिक, आर्थिक एवं राज्नीतिक द्रृष्टि ने अनगिनत असंगतियों को चिपकाते हुए राष्ट्र की शकल को मलिन बनाते हुए जी रहा था। चूँकि कवि अपने युग का द्रष्टा और स्रष्टा होता आया है इस द्रृष्टि से यौवन और पौरुष का कवि दिनकर क्रांति और विध्वंस के आह्वान द्वारा भी नव सर्जन की प्रेरणा देता रहा है। राष्ट्र की प्रतिभा को लांक्षित करनेवाले युगीन प्रश्नों पर उनकी पैनी द्रृष्टि रही है। इसका आभास हमें 'बन फूलों की ओर', 'कविता की पुकार' और 'बागी' रचना से चल जाता है। इनमें कही क्रृषक की दयनीय दशा का दर्शन है, कही जेल के सीकचों में कसे आजादी के दीवानों और उनके वियोग में कलपते रोते परिवार की मार्मिक चीत्कार है, तो कही देश व्यापी आर्थिक शोषण एवं किसान आँदोलन से व्यथित कवि-कंठ द्वारा लोकमंगल केलिए फूट पडने का आह्वान है:-----

"लाखों क्रोंच करह रहे है, जाग आदि कवि की कल्याणि
फूट-फूट तू कवि-कंठसे,बनव्यापकनिजयुगकीवाणी॥"[29]

--------(रेणुका-32)

'दिगंबरि', 'असमय आह्वान', 'हाहाकार', 'भीख', 'दिल्ली' और 'विपथगा' आदि सामाजिक वैषम्य एवं साम्राज्यवादी शासन के व्यापक शोषण को वणी

देनेवाली रचनाएँ है। इनके माध्यम से कवि प्रतिहिंसात्मक क्रांतिकारी स्वर ध्वनित करता रहा है। दिनकर का कवि श्रमिकों, किसानों एवं कोटि-कोटि माँ-बहूँ और बहनों की अर्थनग्नता एवं विवशता से संत्रस्त होकर राजनैतिक एवं आर्थिक क्रांति केलिए मचल उठता है। इस प्रृथ्वी के सभी पुत्रों को जीने का अधिकार है। ऐसी घोषण करता हुआ वह चिग्धाड उठ्ता है :----

"वे भी यही, दूध से जो अपने श्वानों को नहलाते है।
ये बच्चे भी यही , कब्र में दूध दूध जो चिल्लाते है ॥"[30]

कवि की द्रृष्टि में सारे अभावों और शोषक प्रव्रुत्तियों का मूल पूँजीवाद है। कवि उस पर डँटकर प्रहार करता है। देखिए :----

"धन-पिशाच के क्रृषक-मेघ में नाच रही पशुता मतवाली।
आग़ंतुक पीते जाते है, दोनों के शोणित की प्याली!"[31]

------ रेणुका -32

आजादी के बाद भारतीय जनता की तरह कवि को भी बडी श्रध्दा थी कि उपरोक्त स्थिति में काफी सुधार आऐगा, किंतु राष्ट्रनायकों को वैभव-विलास की साज-सज्जा में निमगन देख कवि का सारा स्वप्न चकनाचूर हो गया। 'दिल्ली' को नववधू के साज-बाज में संवारते देख उसे अनेकों प्रतीकों के रूप दे देकर कवि ने व्यंग्य बाणों से छेदा है। एक तरफ भगतसिंह को फाँसी के तख्ते पर लटकाया जाय और इधर दिल्ली शासकों को मोहने केलिए सजे, दिनकर इसे गवारा नही कर सकता। उसने यह कहकर तुरंत फटकार दिया कि—-- "मरघट में तू साज रही दिल्ली कैसे श्रृंगार यह बहार का स्वांग अरी इस उजडे हुए चमन में।"[32]

अछूतोध्दार के प्रज्वलित प्रश्न से 'बोधिसत्व' की रचना हुई है। सांप्रदायिक समस्या के संदर्भ में 'तकदीर का बटवारा' और 'कस्मैदेवाय' कटु आलोचना से पूर्ण रचना है। 'मेघरंध्र' में बजी रागिनी, अबीसिनिया पर इटली के आक्रमण की कविता है। द्वितीय विश्व-युध्द की समस्या पर 'कुरुक्षेत्र' का प्रबंध लिखा गया है। चीनी आक्रमण जिसने भारत के मस्तक को विश्व में झुका दिया है,के प्रश्न को लेकर 'परशुराम की प्रतीक्षा' का सर्जन हुआ है।ये रचनाएँ कवि की व्यपक राजनीतिक निपुणता की परिचायक है। इन कविताओ में सारा सामाजिक वैषम्य , आर्थिक शोषण एवं राजनीतिक हलचलों को धड्कन सुनाई दे जाती है। कवि ने इस तध्य को यह कह्कर कि- "मेरी कविताओं के भीतर जो अनुभूतियाँ उभरी, वे विशाल भारतीय जनता की अनुभूतियाँ थीं।"[33] मुक्तकंठ से स्वीकार किया है।

क्रांति की अभिव्याक्ति

दिंनकर की क्रांति की अभिव्यक्ति मात्र राजनीतिक असंतोष के पक्ष में ही नही , आर्थिक शोषण के संदर्भ में भी पर्याप्त मात्रा में हुई है। कवि भीख के रूप में भी वह आग माँगता है – जो देश की गुलामी, शोषण और अत्यचार को भस्म कर दे। कवि का कलम तो वीरों की जय बोलने में ही गौरव मानती है। उसे तो उनकी ही प्रशस्ति अच्छी लगती है –जो देश केलिए सिर हथेली पर लेकर चलते है। 'विपथगा' काव्य में कवि ने क्रांति का तांडवी और भैरवी रूप प्रस्तुत किया है। जिसकी चितवन से शैल-शिखर तक टूटने लगते है असमानता क्रांति की जननी होती है ---

"स्वानों को मिलते दूध, वस्त्र, भूख बालक अकुलाते है।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर जाडों की रात बिताते है ॥
युवति के लज्जा-वसन बेच जब ब्याज चुकाये जाते है।
मालिक जब तेल फुफेलों पर पानी सा द्रव्य बहाते है।
पापी महलों का अहंकार देता मुझको तब आमंत्रण ॥" [34]

क्रांति म्रृत्युंजय कुमारों पर होकर आगे बढ्ती है तब पार्लियमेंट की वे सरकारें जो कानून के नाम पर गुलामी को कायम रखना चाहती है और जो 'नीरो' और 'जार' जैसे शासकों द्वारा शासित है उनके प्राण सूखे जाते है। यह विपथ-गामिनी न जाने कब किधर से आ गये और अम्बर में आग लगा दे। 'सामिधेनी' संग्रह के अंतर्गत कवि की ऐसी ही क्रांति की रचनायें है जो क्रांति के रूप को मुखरित करती है। सन 1941 से लेकर सन 1946 तक का काल घोर संघर्ष का काल रहा है। 'जवानी' और 'साथी' काव्यों में कवि ने ऐसी ही भावनाओं का चित्रण किया है जिन्में वीरों ने मरना जाना है परंतु हाथका झण्डा नही झुकने दिया।

समसामयिक, सामाजिक और आर्थिक वैषम्य कवि की क्रांति को सदैव जगाता रहा। कवि इस शांति को कभी पसंद नही करता जिसमें दबकर रहा जाय। वह तो युध्द द्वारा उसका प्रतीकार चाहता है। वह नौनिहालों के सूखे होठ नही देख सकता ---

"दूध दूध ! ओ वत्स ! मंदिरों में बहरे पाषाण यहाँ है।
दूध दूध ! तारे बोलो इन बच्चों के भगवान कहाँ है ॥"[35]

आर्थिक विषमता का इतना करुण और क्रांतिकारी चित्र अन्यत्र दुर्लभ है।अंत में कवि बच्चों के दूध केलिए स्वर्ग पर धावा बोल देता है, वह कहता है---

"हटो व्योम् के मेघ, पंथ के स्वर्ग लूटने हम आते है।
'दूध-दूध' ओ वत्स! तुम्हारा दूध खोजने हम आते है॥" [36]

-----हुंकार-23

आर्थिक विषमता का इतना करुण और क्रांतिकारी चित्र अन्यत्र दुर्लभ है। 'कुरुक्षेत्र' के अंतर्गत कवि युध्द को इसलिए धर्म मानता है कि वह आर्थिक विषमता व संदर्भ में ही उदभुत होता है। क्रांति के संदर्भ में कवि ने लाल क्रांति को भी अपने काव्यों में स्थान दिया है। परंतु वह हमेशा भारतीय क्रांति का पक्षपाती रहा है। अहिंसावादी राष्ट्रीयता के युग में हिंसा के स्वरों को जगाये रहना कवि के साहस का परिचायक है।दिनकर की राष्ट्रीयता पौरुष की दीप्त क्रांति की चिनगारी महानाश के तत्वों से निर्मित है। कवि की स्वतंत्रता पूर्व की रचनाओं में क्रांति का स्वर बडा ही उत्तेजना पूर्ण और क्रांति की ज्वालाओं से दधक उठा है। उसने अपने काव्यों को अंगारों से सजाया और आहुति का संदेश दिया है। उसकी क्रांति प्रायः समस्त प्रकार की विषमतओं को देखकर फूट। वस्तुतः दिनकर जी राष्ट्रीय काव्यधारा के संदर्भ मे उतने ही प्रभावशाली पूर्ण है जितने राजनीति में तिलक।

सांस्क्रृतिक राष्ट्रीयता ; अतीत और इतिहास

सांस्क्रृतिक राष्ट्रीयता जन्म भूमि के प्रति प्रेम, अतीत के गौरव के प्रति सजगता, सचेत, सामाजिक पुनरुथ्थान तथा भाषा के विकास आदि को लक्ष्य

रखती है, सांस्कृतिक राष्ट्रीयता कहलाती है। इसे पुनरुत्थानवादी राष्ट्रीयता भी कहा जाता है। जातीय गौरव के प्रति सचेत यह राष्ट्रीयता जातीय पुंरुत्थान चाहती है। [37]

संस्कृति किसी भी देश और काल की शाश्वत संपत्ति है। सच्चा राष्ट्रप्रेमी कवि स्वदेश की संस्कृति, उसके उज्वल और स्वर्णिम इतिहास से संजीवनी ले लेकर अपनी रचनाओं को प्राणवान बनाता रहा है। दिंनकर में हमें भारतीय संस्कृति के प्रति अनंत मुग्धता एवं श्रध्दा भाव पाते है। 'हिमालय' उनकी प्रारंभिक रचनाओं में श्रेष्ठ है। इस पौरुष के प्रतीक में पुरानी संस्कृति का स्मरण हुआ। कवि अतीत और वर्तमान के असंतुलन की ओर संकेत कर यौवन को समर्पित करके रणोद्दीप्त करने की अनंत क्षमता भर देता है। इस महाशक्ति स्रोत को समाधि त्यागने की प्रार्थना करता हुआ कहता है—

"तू मौन त्याग्कर, सिंहनाव, रे तपी !आज तप का न काल ।
नवयुग शंख-ध्वनि जगा रही, तू जाग-जाग मेरे विशाल ।।"

--- रेणुका 8

अतीतकालीन सांस्कृतिक प्रृष्ठों को पलट्ता हुआ वह 'हिमालय' कविता में अतीत के महापुरुष राम, क्रृष्ण, भीम, युधिष्ठिर, गौतम, महावीर, अशोक, चंद्रगुप्त, समुद्रगुप्त, राणा प्रताप आदि का स्मरण करता है और अवशेषों के रूप में नालंदा, पाटलीपुत्र, वैशाली, कपिलवस्तु आदि स्थानों का स्मरण करता है। गण्ड्की और ग़ंगा की हर लहर उसे स्मृति की धारा में बहा ले जाती है। 'समाधि के प्रदीप से' 'वैभव की समाधि' 'मिथिला' 'पाटलीपुत्र की गंगा' आदि कविताओं मे कवि देश के उज्जवल अतीत को ही पुनःपुनः स्मरण कर उसे चित्रित करता है सचमुच कवि ने अतीत और वर्तमान को अंकित करके देश के गौरव को वाणी दी है। इन कथाओं का निष्कर्ष युगीन स्वातंत्रय यज्ञ में आहुति देने की चेतना जगाना ही रहा है। 'रश्मिरथी' के कर्ण 'कुरुक्षेत्र' के भीष्म और 'परशुराम की प्रतीक्षा' के राम क्रमशः मानवीय मूल्यों के संरक्षक, शूरमा, क्रांतिकारी चेतना के वाहक और क्रृध्द भारत के युध्दारूढ व्यक्तित्व के संप्रेरक उदात्त प्रतीक है। दिनकर की राष्ट्रीय चेतना संस्कृति और इतिहास के संदर्भों से संप्रृक्त और अतीत गौरव से अनुस्यूत होकर वर्तमान राष्ट्र जीवन की समस्याओं का कोई न कोई हल ढूँढ निकालने में तत्पर रही है। प्रत्येक स्वाधीन एवं स्वमानी राष्ट्र अपने अतीत गौरव का सर्वैक्षण करता रहा है। इस संदर्भ में दिनकर जी ने अतीत युग के बहुत से उदात्त मूल्यों एवं द्रृष्टिकोणों की नवयुग के अनुरूप प्रगतिशील चमक देकर उसे पुनः नवमानवता के मंगल विधायक कतृत्व से आपूरित कर दिया है। पूर्ववर्ती राष्ट्रीय कवियों की तरह "उन्होंने भी इतिहास को काव्य में ध्वनित करने की चेष्टा की, वर्तमान की चित्रपटी पर अतीत को सम्भाव्य बनाया।"[38]

राजनीतिक राष्ट्रीयता

राजनीतिक राष्ट्रीयता में राष्ट्र राजनीतिक विकास की दिशा प्रशस्त की जाती है। इसका पर्यवसान जनवादी भावधारा में होता है। राजनीतिक राष्ट्रीयता संपूर्ण राष्ट्र को एक इकाई मानती है। इस इकाई के प्रति प्रेम-भाव उसमें होता है, खण्ड के प्रति नही। खण्ड के प्रति प्रेम-भाव भूमि तथा जन की खण्डित चेतना है। वह राष्ट्रीय भावना को विश्रृंखलित कर देता है। राजनीतिक राष्ट्रीयता इस खण्ड को ग्रहण नही करती। वह राष्ट्र की भूमि तथा जन को समग्रता में अपनाती है। यह स्पष्ट है कि राष्ट्रीयता की भावना प्रत्येक काल में होती है, लेकिन परतंत्रता तथा विदेशी शासन के काल में इस्में अधिक तीव्रता आती है। इस अवसर पर बलिदान एवं उत्सर्ग की भावना का भी उद्भव एवं विकास होता है। वह राष्ट्रीयता जो सांस्कृतिक क्षेत्र में जातीय गौरव-गान के बावजूद दूसरी जातियों के प्रति आदर-भाव रखती है तथा राजनीतिक क्षेत्र में पूरे राष्ट्र को राष्ट्रीय इकाई मानकर उससे अभ्युत्थान को अपना लक्ष्य समझती है, उत्तम एवं उदात्त राष्ट्रीयता है। यह अन्य राष्ट्रों के प्रति भी द्वेष-भाव नही, वरन उदार विचार रखती है। ऐसी राष्ट्रीयता से ही प्रस्तुत विषय का संबंध है। जब राष्ट्र प्रभुत्व संपन्न राज्य होता है। उसके विकास की दिशा में कविता गतिशील होती है। विदेशी आक्रमण तथा परतंत्रता की स्थिति में विदेशी शक्ति को देश से निकालने केलिए वह जन मानस में उत्सर्ग एवं बलिदान की प्रेरणा भरती है। सांस्कृतिक उन्नयन की ओर भी कविता प्रवृत्त होती है तथा पुनरुत्थअन की कामना करती है। इसतरह प्रस्तुत शोध-पत्र में सांस्कृतिक तथा राजनीतिक दोनों प्रकार की राष्ट्रीयता का प्रतिफलन होता है। ऐसे ही राष्ट्रीयता कासंक्षिप्त परिचय दिया गया है।

अन्तर्राष्ट्रीयता

अन्तर्राष्ट्रीयता का क्षेत्र राष्ट्रीयता से बहुत व्यापक है। इसके मूल में सर्व मानववाद की, विश्वबंधुत्व की भावना है। इतना निश्चित है कि अंतराष्ट्रीयता का मूल आधार मानवतावाद है। यह राष्ट्रों की सीमा से दूर हटकर संपूर्ण मानव-मात्र में आत्मीयता का बोध कराती है और उनके कल्याण एवं सुख की भावना की ओर उन्मुख करती है। यह कहा जा सक्ता है कि अंतराष्ट्रीयता की भावना राष्ट्रीयता की तरह ही नवीन है, किंतु इसके विकास के बीज हम सुदूर अतीत में देखते है। भारतीय मानवतावादी विचारकों ने राष्ट्र की सीमा को विस्तार प्रदानकर सर्व- मानव मंगल की उद्घोष करते हुए कहा ---

सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामयः ।
सर्वैं भद्राणि पश्यन्तु माकश्चित दुख भाग्भवेत।।"[39]

आधुनिक कविता की मुख्य प्रवृत्तियों के अंतर्गत डा. नगेंद्र ने भी अंतराष्ट्रीयता की भावनाओं का समर्थन करते हुए लिखा है--- "संस्कृति का मूल तत्व है आत्मा का संस्कार जिसमें क्षुद्रता केलिए अवकाश नही रहता। इसमें प्रायः अपने गौरव के ही भाव है, दूसरे की हीनता के नही। इस विचारधारा पर गाँधी के सर्वधर्म सम्भाव्य और रवींद्र की अंतर्राष्ट्रीयता तथा विश्व संस्कृति की कल्पना का गहरा प्रभाव था, जिसने जाति, सम्प्रदाय और देश के ब्रृहत्तर इकाई को विश्वमानव की उदार भावनाओं को जन्म दिया। दिनकर की राष्ट्रीयता प्रदेश से देश और विश्व की दिशा में प्रयाण करती रही है। उसकी द्रृष्टी में स्च्ची राष्ट्रीयता दूसरों पर आक्रामक स्वरूप नही ग्रहण् करती, बल्की विश्वबंधुत्व की एक स्वस्थ और सशक्त कडी बन जाती है। दिनकर के काव्य में हमें उदात्त राष्ट्रीयता के सभी तत्व मिल जाते है। 'कस्मैदेवाय' में वह धर्म-वैविध्य को समाप्त कर समानता की सद्भावना जगाता है ---

"धर्म-भिन्नता हो न सभी जन,
शैल-तटी में हिल-मिल जाये।"

-----रेणुका—34

दिनकर के चिंतन में राष्ट्र ही नही समस्त मानवता समाहित है। वे मानव जगत को कर्म में लय होने का मंगल संदेश देते हुए कहते है: ------

"कर्म भूमि में निखिल महीतल, जबतक नर को काया।
तबतक है जीवन के अणु-अणु में कर्तव्य समाया।।" [40]

---कुरुक्षेत्र 107

रश्मिरथी में अण्विक युध्दों की भर्सना करता हुआ मानव को अपना भाग्य विधायक बनने की राय देता है –

"है व्रृथा, धर्म का किसी समय करना विग्रह के साथ गंथन
करुणा से कढ़ता धर्म विमल, है मलिन पुत्र हिंसा का रण।।"[41]

--रश्मिरथी: 95

हिंसा और युध्द को कवि घ्रृणित कर्म मानता है और मैत्री त्याग तथा सहिष्णुता को सर्वोपरि महत्व देते हुए राष्ट्रीय कंठ से विश्व मनवता का राग आलापता है। हिमालय के संदेश में वह हिमालय द्वारा विश्व को संदेश देते है कि भारत ही विश्व-शाँति का सूत्रधार हो सकता है---

"भारत एक स्वप्न, भू को ऊपर ले जाने वाला।
भारत एक विचार, स्वर्ग को भू पर लाने वाला।।
भारत है संज्ञा विराग की, उज्जवल आत्म उदय की,
भारत है आभा मनुष्य की सब से बडी विजय की।"[42]

राष्ट्रदेवता का विसर्जन' और 'किसको नमन करू' में कवि विश्वबंधुत्व की ओर बढ़ता गया है। वह विश्व मैत्री के सादर स्वीकार की तीव्र उत्कंठा व्यक्त करता हुआ, उसमें अखिल स्रृष्टि के अमरत्व और शाँति-सुख की मंगलाशा ध्वनित करता है कि जब राष्ट्र-राष्ट्र और जाती-जाती के मध्य मैत्री होगी—

"तब उतरेगी शाँति, मनुज का मन जब कोमल होगा ।
जहाँ आज है गरल, वहाँ शीतल गंगाजल होगा ।।"[43]

---- चक्रवाल-378

दिनकर ने चीनी मैत्री का डंक झेलते हुए देखा है। अतः वह गाँधी जी के 'अजाधर्म' के विरुध्द विश्व में 'शूरधर्म' का अभयत्व प्रदायक मंत्र प्रचारित करता हुआ कहता रहा है –

'शूरधर्म है अभय दहकतते अंगारों पर चलना ।
शूरधर्म है अथवा शोणित असि पर, घरकर पाँव चलना।।"[44]

----कुरुक्षेत्र -44

यदि समाज में समता और सद्भाव नही है तो मात्र समाजवाद का नारा उछालने से मानव सुखी नही होगा। कवि का विश्वास है ---

"जब तक मनुज-मनुज का यह, सुख-भाग नही सम होगा।
शमित न होगा कोलाहल, संघर्ष नही कम होगा।"[45]

---- कुरुक्षेत्र : प्र्.87

युध्दातंक से संत्रस्त विश्व को मानवीय मूल्यों एवं सामाजिक संबंधों की सुगठित व्याख्या करनेवाला 'कुरुक्षेत्र' वर्तमान युग की एकमात्र प्रबंध क्रृति है, जिसमें युध्द की व्यापक भाव-भूमि,समस्या की पूर्ण स्फोटकता एवं समाधान की व्यापक वैचारिक योजना है। जो विश्व की शाँति का मार्ग-निर्देश कर सकता है।

उपर्युक्त निष्कर्षों से यह पता चलता है कि आधुनिक हिंदी साहित्य में दिनकर अत्यंत प्रौढ एवं गंभीर विचारक है। उन्होंने अपने विचारों को अत्यंत काव्यात्मक भाषा में व्यक्त किया है। उन्होंने जीवन और जगत के सभी पहलुओं पर विचार किया है। उन्होंने अपने काव्यों में राजनीतिक, साआजिक, आर्थिक तथा दार्शनिक क्षेत्रों को विभिन्न सम्स्याओं पर अत्यंत सूक्षम विवेचन प्रस्तुत किया है। दिनकर के काव्यों में व्याप्त राष्ट्रीयता की सरिता बडी ही प्रचंड प्रवाहिनी रही है। उनका काव्य राष्ट्रीयता का अजस्र स्रोत है, जिसमें विदेशियों के शोषण एवं सामाजिक अनीति के विरुध्द भीषण हुंकार है। क्रांति की दाहक ज्वाला है। विद्रोह, विनाश और महाविध्वंस का प्रबल आह्वान है। अतीत संदर्भों,एतिहासिक प्रृष्ठों एवं सांस्क्रृतिक कोड में युग के प्रेरक मूल्यवान चेतना का उत्तम चयन और भव्य समारोह है। वर्तमान के मंगल भविष्य केलिए अतीत का गुणगान है। शोषित राष्ट्र, जाति एवं वर्ग के नवोत्थान की गीता है। इतना ही नही उसमें स्वधर्म और राष्ट्र के प्रति जितनी ही प्रखर
आत्म बलिदानी भावना है,उतनी विश्वबंधुत्व की उदात्त चेतना भी है। धार्मिक एवं सांप्रदायिक एक्य की सद्भावना भी है। कवि की इसी विश्वमंगलकारी मानववादी व्यापक राष्ट्रीय चेतना को देखकर ही आलोचकों ने उसे आधुनिक राष्ट्रीय काव्य का युगचरण कहा है। डाँ. रामदरश मिश्र के अनुसार –-

"दिनकर की राष्ट्रीयता बहुत गतिशील, संश्लिष्ट और उदार है –उसमें तात्कालिकता, परंपरा, राष्ट्रीयता, अंतराष्ट्रीयता , मानवता, भावनाशीलता, वैचारिकता का अद्भुत समन्वय है।"[46] दिंनकर जी जनजागरण संबंधी आधुनिक काव्यधारा के सर्वश्रेष्ठ वैतालिक है। उनकी राष्ट्रीय उपलब्धियों को देखते हुए राष्ट्रीय काव्य-युग को 'दिनकर' युग की संज्ञा देना सर्वथा समीचीन माना गया है।

अतः आधुनिक हिन्दी काव्य साहित्य में एक सशक्त कवि के रूप में दिनकर जी का स्थान अक्षुण्ण है। पर आधुनिक हिन्दी – साहित्य में एक महान विचारक केरूप में भी दिनकर का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची:

1. राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्य कला – (भूमिका) -डाँ शेखर चंद्र जैन –
2. राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्य कला – डाँ शेखर चंद्र जैन – पृ. 47
3. विकीपीडिया
4. दिनकर व्यक्तित्व एवं क्रृतित्व—संपादक. जगदीशप्रसद चतुर्वेदी—भूमिका
5. राष्ट्र कवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना –- सं.प्रतापचंद जैसवाल – प्र्. 42
6. 'चक्रवाल' : भूमिका - ------ दिनकर -- पृ.33
7. दिनकर- डाँ. सावित्री सिन्हा –- पृ. 232
8. दिनकर –लक्ष्मीनारायण सुधांसु –पृ.89
9. दिगभ्रमित 'राष्ट्रकवि' – प्रो.कामेश्वर शर्मा – प्र्. 42
10. रेणुका -- दिनकर – पृ.2
11. हुंकार – दिनकर – प्र्10
12. रेणुका – दिनकार – प्र्ृ 32

13. रेणुका – दिनकर – प्र.7
14. वही प्र. ख. ग
15. वही (तांडव) प्र. 9
16. रेणुका (कस्मैदेवाय) -- दिनकर - पृ.32
17. रेणुका (कस्मैदेवाय)---दिनकर –33
18. रेणुका (हिमालय) – दिनकर – प्र--.7
19. हुंकार- ---- –दिनकर ----------प्र.-- 57
20. सामिधेनी –-- दिनकर -- प्र.-- 40
21. परशुराम की प्रतीक्षा- दिनकर – प्र.-- 15
22. परशुराम की प्रतीक्ष – दिनकर- - प्र- 42
23. हुंकार की भूमिका (क्रांति का कवि)-- रामव्रृक्ष बेनीपुरी -- पृ.2
24. हुंकार -(आमुख) -------- दिनकर –-- पृ---2
25. हुंकार -(आलोक धन्वा) ----दिनकर -- पृ--.14
26. हुंकार – (दिगंबरी) - - - दिनकर –-. प्र---25
27. वही - -
28. दिनकर स्रृष्टि और द्रृष्टि (युगधर्म की पुकार रेणुका और हुंकार) : हरप्रसाद शास्त्री -पृ.157
29. रेणुका – दिनकर ----प्र.–32
30. हुंकार – (हाहाकार) — प्र. 23
31. रेणुका— दिनकर— प्र--.32
32. हुंकार - (हाहाकार) – दिनकर - पृ, 44-
33. चक्रवाल –भूमिका- दिनकर- प्र.- 43
34. हुंकार- विथगा – प्र.73
35. हुंकार- (हाहाकार) – प्र.22-23
36. वही----(हाहाकार)— प्र.22-23
37. आधुनिक हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय चेतना का विकास – डाँ. जितराम पाठ्क – 29
38. युगचरण दिनकर – डाँ सावित्रि सिन्हा – प्र. 47
39. आधुनिक हिंदी काव्य में राष्ट्रीय चेतना का विकास – डाँ. जितराम पाठक –प्र.20
40. कुरुक्षेत्र – दिनकर – प्र.107
41. रश्मिरथी – दिनकर - प्र.41
42. हिमालय – दिनकर – प्र, 20
43. चक्रवाल – दिनकर – प्र.- 378
44. कुरुक्षेत्र - दिनकर – प्र – 44
45. कुरुक्षेत्र – दिनकर - प्र -87
46. हिंदी "कविता-त्तीन दशक"—डाँ. रामदरश मिश्र --- पृ.69